बुद्ध की करुणा
सर्वेश्वरदयाल सक्सेना

बुद्ध की करुणा

सर्वेश्वरदयाल सक्सेना

वाणी प्रकाशन
21-ए, दरियागंज, नई दिल्ली-110002
फोन : 23273167, 23275710, फैक्स : 23275710
e-mail : vani_prakashan@yahoo.com
vani_prakashan@mantraonline.com

मूल्य : 25/- ISBN : 81-7055-160-9 संस्करण : 2011

बुद्ध की करुणा

(दौड़ते हुए घोड़ों के टापों की आवाज, बीच में एक बाल की पुकार, ''कुमार, कुमार! जरा रुको!'' घोड़ों के टापों की आवाज खत्म हो जाती है।)

दूसरा बालक : (शिकायत के स्वर में) तुम तो बहुत तेज भागते हो कुमार।

पहला बालक : देखो, मैं और मेरा घोड़ा दोनों पसीने से बिल्कुल तर हो गए हैं।

तीसरा बालक : यहीं उतर पड़ो। देखते हो यह कितना प्यारा है। इस हरे-भरे मैदान के चारों तरफ यह घने काले जंगल कितने अच्छे लगते हैं।

पहला बालक : हाँ, सामने के उस जलाशय में जंगल के तमाम जानवर पानी पीने आते हैं। शिकार के लिए इससे अच्छी जगह कोई नहीं है। **(सबके उतरने की आवाज।)**

दूसरा बालक : मुझे याद आ गया कुमार! एक दिन दयामित्र यहीं तेजी से चक्कर काटते हुए एक बाज पर बहुत देर निशाना लगाता रहा। उसके तरकश के कितने ही तीर खाली हो गए लेकिन बाज वैसे ही उड़ता रहा। एक भी तीर नहीं लगा। हम लोग उस समय तुम्हारी याद

कर रहे थे। तुम होते तो वह नहीं बच पाता। तुम्हारा निशाना कितना अचूक है।

तीसरा बालक : (जोर से हँसते हुए) वाह दयामित्र! तुम तो अपने निशाने की बड़ी तारीफ करते थे। एक छोटा-सा बाज तक नहीं मार सके।

दयामित्र : देखो विहाग! तुम मेरा मजाक मत उड़ाओ। यह तो समय-समय की बात है। निशाना सबका चूक सकता है और रहा विश्वमित्र, वह तो चापलूस है। आज कुमार को देख कर उसकी प्रशंसा कर रहा है और उस दिन मुझसे कह रहा था, इसका निशाना तो स्वयं कुमार नहीं लगा सकते थे।

विश्वमित्र : (बात काट कर कुछ आवेश में) दयामित्र! झूठ-मूठ का दोष मैं सहन नहीं कर सकता। अपनी झेंप मिटाने के लिए मुझ पर आक्षेप क्यों करते हो?

दयामित्र : झेंप कैसी? तुम्हीं ने कौन उसे मार

गिराया था!

विश्वमित्र : मैंने तो प्रयास ही नहीं किया।

कुमार : तुम लोग क्यों झगड़ते हो? यह देखो सामने पहाड़ी की हरी-हरी ढाल, ऊपर वृक्षों की आड़ में झाँकता हुआ सूरज, नीचे जलाशय के एक किनारे सोई हुई छाँह और दूसरे किनारे सोई हुई धूप। सब कितना अच्छा है। मैं तो यहाँ कुछ देर बैठ कर इस सुन्दर दृश्य को जी भर कर देखूँगा। तुम लोग चाहो तो जाकर शिकार खेल आ सकते हो। उसके बाद मुझे ले लेना।

विहाग : मैं तो नहीं जाऊँगा। मुझे तो इन लताओं और झाड़ियों के फूल बहुत पसन्द हैं। मैं तो इसका एक मुकुट बनाऊँगा। मुझे तो सोने के मुकुट से ये फूलों के मुकुट ज्यादा सुन्दर लगते हैं।

दयामित्र : नहीं कुमार! आज तुमको हम लोगों के साथ शिकार खेलना पड़ेगा। यह नहीं हो सकता कि

नित्य की भाँति आज भी आप यहाँ बैठ के बैठ रह जाए।

विश्वमित्र : तुम जिद क्यों करते हो, यदि उनकी इच्छा नहीं है!

दयामित्र : हाँ-हाँ, तुम तो चाहोगे ही। लेकिन आज हमारा-तुम्हारा निर्णय होकर रहेगा। तुम्हारी शेखी अब मैं ज्यादा नहीं सह सकता। तुम भी देख लो कि मेरा निशाना तुमसे कहीं अच्छा है।

विश्वमित्र : यदि तुम्हारी यही इच्छा है तो यही सही। मुझे कोई आपत्ति नहीं है।

विहाग : (**एक बनावटी लम्बी साँस भर कर**) अच्छी बात है। तब फिर जो जीतेगा मैं अपना मुकुट उसे दे दूँगा।

कुमार : थोड़ा चुप भी रहो (**कहीं दूर से आती हुई बाँसुरी की आवाज**) कितनी अच्छी बांसुरी बजा रहा है कोई!

विहाग : सचमुच।

दयामित्र : (**लापरवाही से**) कोई चरवाहा होगा।

कुमार : नहीं विहाग, मुझे सचमुच यहाँ बैठने पर शान्ति का अनुभव होता है। अपने महल के फूल और पेड़ों से मुझे ये जंगली फूल और पेड़ ज्यादा अच्छे लगते हैं।

विहाग : इसलिए कि तुम यहाँ थोड़ी देर के लिए आते हो। अगर कुछ दिनों रहना पड़े तो पता चल जाए।

हर नई चीज अच्छी लगती है। जंगलों का जीवन तुम्हारे लिए नया है इसीलिए अच्छा लगता है। रहना पड़ जाए तब अच्छा नहीं लगेगा, जान छुड़ाओगे।

कुमार : तो विहाग, राजमहलों की तरह जंगल भी अच्छे नहीं हैं। फिर इस दुनिया में कौन-सी जगह अच्छी है?

विहाग : मैं नहीं जानता। इतना अवश्य है कि अपने पिता के साथ मुझे एक बार दो-चार दिनों के लिए जंगल में रहना पड़ा था। मेरी तो तबियत ऊब गई थी।

कुमार : तो क्या तुम्हें महल अच्छे लगते हैं?

विहाग : क्यों नहीं, मुझे सब अच्छा लगता है। मेरी जान छोड़ो। तुम तो जिस चीज को पकड़ते हो उसके पीछे इतना अधिक पड़ जाते हो कि मुझे तुमसे डर लगने लगता है। फिर अभी तुम पूछोगे महल क्यों अच्छा लगता है? जंगल क्यों नहीं अच्छा लगता?

कुमार : तुम तो बिगड़ जाते हो। लेकिन विहाग, कभी मैं जंगल में अवश्य रहकर देखूँगा।

विहाग : रहना भाई, रहना। इस समय तो कान न खाओ। देखते हो तुम, तुमने इस तरह की बात करनी शुरू नहीं की कि विश्वमित्र और दयामित्र का मुँह फूल गया। दयामित्र तो मारे क्रोध के अपनी तलवार से उस झाड़ी की तमाम शाखाएँ काटे डाल रहा है।

कुमार : क्यों दयामित्र! नाराज तो तुम हमसे हो,

फिर उस सुन्दर झाड़ी के टुकड़े-टुकड़े क्यों कर रहे हो? उसने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है? ओफ ओ, कितने सुन्दर-सुन्दर फूल, कितनी हरी-हरी पत्तियाँ, कितनी कोमल-कोमल शाखाएँ तुमने काट कर फेंक दी हैं। यह तो अच्छा नहीं किया तुमने।

दयामित्र : (झुंझला कर) मैं तो परेशान हो जाता हूँ तुमसे। मेरी समझ में नहीं आता कि मैं क्या करूँ? दो-चार फूल-पत्तियों का कट जाना आपको अच्छा नहीं लगता और जरा सामने देखिए किसी जानवर ने कितनी शाखाएँ रौंद कर फेंक दी हैं, हवा के झोंकों ने कितने फूल तोड़-तोड़कर फेंक दिए हैं, पेड़ टूटे हुए पड़े हैं।

कुमार : (बात काट कर) इससे हमें क्या? हमें अपने काम से मतलब होना चाहिए, दूसरे क्या कहते हैं या दूसरों ने क्या किया है, इसकी हमें जरूरत नहीं।

दयामित्र : (झुंझला कर) तब तो तुम्हें मेरे बीच में बोलने की कोई जरूरत नहीं।

कुमार : (शान्तिपूर्वक) क्यों? हम-तुम तो मित्र हैं। अगर एक-दूसरे के बीच में हम लोग नहीं बोलेंगे तो और कौन बोलेगा। तुम तो जरा-जरा-सी बात में झुंझला जाते हो। बात में झुंझला जाते हो। बात समझते नहीं। मैं तो केवल इतना कह रहा हूँ कि किसी चीज को बेकार नष्ट करने से क्या फायदा। जबकि एक फूल, एक पत्ती हम बना नहीं सकते फिर उसे बेकार क्यों नष्ट करें?

विश्वमित्र : (बात काट कर) वह तो एक सुन्दर चीज से दूसरी सुन्दर चीज बना रहा है। तुमने क्या किया है? तुमने तो...

दयामित्र : (बात काट कर) अच्छा, अच्छा, आप अपना ज्ञान रहने दीजिए। पहले निशाने से हरा दीजिए फिर ज्ञान में हराइएगा। आपकी कलई अभी खुली जाती है।

विश्वमित्र : (कुछ आवेश में) आप अगर मित्र न होते तो ऐसी अपमानजनक बात सुनकर मैं तुम्हारी गर्दन काट देता। लेकिन तुम्हारी आदत समझ तुम्हें क्षमा करता हूँ।

दयामित्र : (चिल्ला कर) आप अपनी क्षमा रहने दीजिए। मुझे आपकी क्षमा की जरूरत नहीं **(तलवार निकालते हुए)** निकालिए अपनी तलवार! देख लूँ आपकी ताकत।

कुमार : (हँसते हुए) मुझे डर लगता है कि किसी

दिन आपस में कहीं तुम लोग सचमुच ही न कट मरो। आपस में एक-दूसरे को नीचा दिखाने से क्या फायदा? अगर एक जगह कोई एक दूसरे से ज्यादा है तो दूसरी जगह एक दूसरे से कम।

दयामित्र : (आवेश में) मैं तुम्हारी यही एक बात नहीं मानूँगा कुमार। आज फैसला हो जाना चाहिए कि हम दोनों में किसका निशाना अच्छा है। मैं रोज-रोज इनका व्यंग्य नहीं सह सकता।

विश्वमित्र : मैंने व्यंग्य तो कभी नहीं किया। तुम हमेशा मेरी बात को व्यंग्य में ही लेते हो तो मैं क्या करूँ?

दयामित्र : अच्छा-अच्छा, सफाई मत दीजिए। बचाव का तरीका सोचने की जरूरत नहीं। आज निश्चय होकर ही रहेगा।

विश्वमित्र : मैं तो तैयार हूँ।

कुमार : आखिर लाभ क्या होगा दयामित्र, यदि यह निश्चय ही हो जाए कि तुम्हारा निशाना सबसे अच्छा है।

यही न कि तुममें जो अपने को बड़ा साबित करने की भावना है उसको सन्तोष हो जाएगा। तुम यह समझने लगोगे कि तुम एक बड़े निशानेबाज हो।

दयामित्र : मुझे तुम्हारा उपदेश नहीं सुनना है। अगर बिना सुनाए न रहा जाता हो तो फिर कभी सुना लेना। इस समय इस बात का निर्णय हो ही जाना चाहिए।

विहाग : अच्छी बात है। **(कहीं दूर फिर बाँसुरी बजती है। सब लोग चुप रहते हैं।)**

दयामित्र : कुमार यह जो इस मैदान के पार दूर उस पहाड़ी ढाल पर एक छोटा-सा काला-काला धब्बा दिखाई दे रहा है बता सकते हो वह क्या है?

कुमार : कुछ समझ में नहीं आता।

दयामित्र : कुमार, हम और विश्वमित्र इसका निशाना लगाते हैं, जो लगा ले जाए वह जीत जाएगा।

कुमार : जैसी तुम्हारी इच्छा।

दयामित्र : उठाओ अपना धनुष विश्वमित्र! पहला प्रयत्न तुम्हीं करो।

विश्वमित्र : नहीं, नहीं, पहला प्रयत्न तुम्हीं करो।

दयामित्र : अच्छी बात है, मैं तुम्हारी तरह भगोडा थोड़े ही हूँ **(धनुष से तीर छोड़ता है।)**।

दयामित्र : **(खुशी से चिल्लाकर)** वह देखो कुमार! वह धब्बा खो गया। निशाना ठीक लगा है, चलो देखें क्या है?

(घोड़े की आवाज जो निरन्तर दूर से होकर पास आती है, फिर बकरी की मैं-मैं की दर्दभरी आवाज।)

कुमार : **(दुःख से)** ओफ, कितना खून निकल रहा है। विहाग, तीर ज्यादा गहरा नहीं है! बच तो सकती है न यह?

विहाग : क्या मालूम।

कुमार : नहीं विहाग, मैं उसे बचाऊँगा। जल्दी उतरो ...पकड़ो...उस तरफ से...हाँ...खोल दो। इतना फाड़ दो **(फाड़ने की आवाज)** चलो कसकर इसके इससे घाव को बाँध दें। खून का निकलना तो कम हो जाएगा। **(बकरी मैं-मैं करती रहती है।)**

दयामित्र : हाँ ठीक है। कुमार, अच्छा होता विश्वमित्र ने पहला प्रयास किया होता। खैर, अब मैं यह सोचता हूँ कि इसको इस पत्थर के सहारे खड़ा कर दिया जाए और बाँध दिया जाए ताकि विश्वमित्र उसी स्थान से जाकर फिर निशाना लगाए।

कुमार : नहीं, यह नहीं होगा। तुम क्या इसे एकदम मार डालना चाहते हो? तुम्हें दया नहीं आती? देखते नहीं हो यह खून, दर्द के कारण उसका चिल्लाना।

दयामित्र : मैं देखता हूँ, यही होगा। तुम विश्वमित्र का पक्ष ले रहे हो। तुम जानते हो कि वह असफल रह जाएगा।

कुमार : यही सही।

दयामित्र : नहीं मैं ऐसा नहीं होने दूँगा। मेरी जीत...

कुमार : (दुःख से) तुम्हें दूसरे की जान से अपनी जीत ज्यादा प्यारी है? क्या जीत की कीमत इसके प्राणों से अधिक है?

दयामित्र : हाँ, इन जानवरों के प्राणों की क्या कीमत! रोज मरते रहते हैं। कितने तो भेड़िए उठा ले जाते हैं। बेकार की बातें मत करो।

कुमार : विश्वमित्र! क्या तुम्हें भी अपनी जीत उसके प्राणों से अधिक प्यारी है?

विश्वमित्र : हाँ कुमार! दयामित्र ने कोई बहुत बड़ा कमाल नहीं किया है। निशाना दूर का अवश्य था लेकिन ठहरा हुआ था। चलता हुआ होता तब कोई बात भी थी। मैं तो देखते-देखते इसे लगा सकता हूँ।

दयामित्र : तो फिर चलो।

विश्वमित्र : चलो।

कुमार : नहीं। विश्वमित्र। केवल एक बात बताते जाओ। तुमको मैं अधिक प्यारा हूँ या तुम्हारी जीत... बोलो जल्दी बोलो। क्या तुम मुझ पर तीर चला सकते हो?

विश्वमित्र : नहीं मुझे आप ज्यादा प्यारे हैं।

कुमार : फिर उतनी ही प्यारी यह बकरी तुम्हारे लिए क्यों नहीं है? इसक भी जान है, हृदय है। यह भी दुःख-दर्द का अनुभव करती है। फिर उसकी जान लेकर भी तुम अपनी जीत क्यों चाहते हो?

विश्वमित्र : मैं उत्तर नहीं दे सकता कुमार। मुझे जाने दो, नहीं तो दयामित्र के व्यंग्य मेरे प्राण ले लेंगे।

कुमार : अपने प्राणों का इतना मोह है? दूसरे के प्राणों का नहीं?

विश्वमित्र : (दर्द से) कुमार!

कुमार : अच्छा, तो फिर मेरे ही कारण तुम इस समय अपनी हार मान लो। अगर तुम हार कर भी किसी के प्राणों की रक्षा कर रहे हो तो बुरा नहीं है। उसके प्राणों का आशीर्वाद किसी दिन तुम पर जीत ही जीत बिखेर देगा।

विश्वमित्र : जैसा आप कहें कुमार...लेकिन...

दयामित्र : (आवेश से) लेकिन...

विहाग : लेकिन दया? दया और करुणा के हाथों बिक जाना पाप नहीं है। कुमार, मेरा वह मुकुट तो तुम जीत गए। वह तुम्हें मिलेगा। नहीं, नहीं तुम्हें क्यों? बल्कि तुम्हारी करुणा को, अपने प्यारे सिद्धार्थ की करुणा को।

(पृष्ठ भाग से बाँसुरी की आवाज, बकरी का चिल्लाना बन्द हो जाता है।)

●●●

मुद्रक : सुधा आफसेट प्रेस, दिल्ली-110092